खरपतवार प्रबंधन :– मसूर में खरपतवार की समस्या मावट की वर्शा होने पर हो सकती है, ऐसी स्थिति में हैण्ड "हो" एवं व्हील "हो" साइकिल यंत्र चलाकर खरपतवार नियंत्रण दिया जा सकता है।

रसायनिक विधि :– खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के 15–20 दिन बाद क्विजेलोफॉप 700 मिली/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

चनौरी *(Medicago denticulate)*

कासनी *(Cichorium intybus)*

अकरी *(Vicia sativa)*

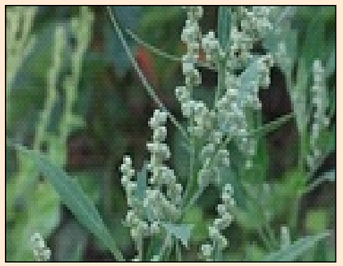

बथुवा *(Chenopodium album)*

रोग प्रबंधन :–

1. **उक्टा रोग–** इस रोग का प्रकोप होने पर फसलों की जड़े गहरे भूरे रंग की हो जाती है तथा पत्तियों झुलसकर पीली पड़ने लगती है। बाद में सम्पूर्ण पौधा सूख जाता है।

नियंत्रण :– थायरम+कार्बेन्डाजिम (2:1) 3 ग्राम दवा/कि.ग्रा. की दर से बीज उपचारित करें। उक्टा निरोधी प्रजातियों का चयन करें जैसे– **JL-3, JL-1** नूरी **IPL-81, RVL-31**, इत्यादि किस्मों का समावेश करें।

2. **पाद गलन (कालर राट) :–** यह रोग के लक्षण प्रारंभिक अवस्था में होते है, पौधे का तना सड़ जाता हैं।

नियंत्रण :–

1. बोवाई के पूर्व 2 ग्राम थायरम+1ग्राम कार्बेन्डाजिम से प्रति कि.ग्रा. बीज का बीज उपचार करें।
2. संतुलित मात्रा में खाइ व उर्वरक का प्रयोग करें।
3. रोग निरोधी किस्मों का चयन करें जैसे– जे.एल.–3, जे.एल.–1, नूरी, आई.पी. एल.–81, आर.व्ही.एल.–31 आदि किस्में।
3. **जड़ सड़न :–** यह रोग मसूर की फसल में देरी से प्रकट होता है। अत: रोग दशीय (ग्रसित) पौधा खेत में अलग–अलग जगह में दिखाई देता है एवं रोग ग्रसित पौधे की पत्तियां अंत में पीली पड़कर सूख जाती है।

नियंत्रण :–

1. बोवाई के पूर्व 2 ग्राम थायरम+1ग्राम कार्बेन्डाजिम से प्रति कि.ग्रा. बीज का बीज उपचार करें।
2. संतुलित मात्रा में खाद व उर्वरक का प्रयोग करें।
3. रोग निरोधी किस्मों का चयन करें जैसे– जे.एल.–3, जे.एल.–1, नूरी, आई.पी. एल.–81, आर.व्ही.एल.–31 आदि किस्में।

उखटा रोग

पदन गलन (कालरराट)

कीट प्रबंधन :–

1. **माहू/एफिड/चेपा :–** मसूर की फसल में मुख्य रूप से माहू का प्रकोप देखा गया है। इसका नियंत्रण इमिडाक्लोरपिड 150 मिली प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करें।
2. **फली भेदक :–** यह कीट फली अवस्था में नुकसान पहुंचाता है। इसके नियंत्रण के लिए इमामेक्टीन बेन्जोएट 100 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

माहू/एफिड/चेपा

कटाई :– मसूर की फसल के पककर पीली पड़ने पर कटाई करनी चाहिए पौधे के पककर सूख जाने पर दानो एवं फल्लियों के टूटकर झड़ने से उपज में कमी आ जाती है, फसल को अच्छी प्रकार से सुखाकर बैल के दाये चलाकर मड़ाई करते है तथा ओसाई करके दानों को भूसो से अलग कर लेते है।

उपज :– मसूर की उपज मुख्य रूप से फसल प्रबंधन पर निर्भर करती है। यदि अनुसंशित विधि से मसूर की खेती की जाती है। तो सामान्यत: 20–25 क्वि./हे. दाना एवं 30–40 क्वि./हे. भूसा की उपज प्राप्त होता है।

इस संबंध में और अधिक जानकारी के लिये सम्पर्क करें:
डॉ. जे.एस. मिश्रा
निदेशक, भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय,
महाराजपुर, जबलपुर – 482 004 (म.प्र.)
फोन: 91–761–2353934 फैक्स : +91–761–2353129

Amrit#0761-2413943

विस्तार पुस्तिका : DWR/58/2020

मसूर फसल
की उत्पादन तकनीक

प्रस्तुतकर्ता
वी. के. चौधरी, पी. के. सिंह, चेतन सी. आर.
धर्मेंद्र बघेले, जैनपाल राठौर

तकनीकी सहयोग– संदीप धगट

(बायोटेक–किसान हब प्रोग्राम के तहत)
भा.कृ.अनु.प. – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय
जबलपुर – 482 004 (मध्यप्रदेश)
ICAR - Directorate of Weed Research
Jabalpur - 482 004 (MP)
(ISO 9001:2015 Certified)

वानस्पतिक नाम : लेन्स कुलीनेरीस अथवा लेंस इसकुलेन्टा

परिवार : लेग्युमिनेसी

उत्पत्तिजनक : इजिप्ट सेन्ट्रल एण्ड साउर्थन यूरोप

सामान्य परिचय :– म.प्र. असिंचित क्षेत्रो में चने की फसल के बाद उगायी जाने वाली दलहनी फसलों में मसूर मुख्य फसल है। मसूर की संरचना ही कुछ ऐसी है, कि पानी का उपयोग पूरे जीवन काल में कम से कम से करती है। मसूर की फसल पाले एवं ठंड के लिए अति संवेदनशील है, फिर भी अन्य रबी फसल जैसे मटर चने की अपेक्षा अधिक ठण्ड सहन कर सकती है।

म.प्र. में इसका क्षेत्रफल लगभग 6.2 लाख हेक्टेयर एवं उत्पादन 2.3 लाख टन तथा उत्पादकता 371 कि.ग्रा/हे. है। म.प्र. में मुख्यरूप से विदिशा, सागर, रायसेन, दमोह, जबलपुर, पन्ना, सतना, रीवा, नरसिंहपुर, सीहोर एवं अशोकनगर जिलो में इसकी खेती की जाती है। मध्यप्रदेश में भारत का कुल मसूर उत्पादन का 45 प्रतिशत योगदान है

उपयोगिता :– दलहनी वर्ग में मसूर सबसे प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण फसल है। इसके दानों में सर्वाधिक पौश्टिक होने के साथ–साथ इस दाल को खाने से विभिन्न प्रकार की बीमारियां नही होती हैं। अर्थात् यह सेहत के लिए फायदेमंद है। मसूर में विभिन्न प्रकार के पोशक तत्व पाये जाते है। जैसे–प्रोटीन 25 प्रतिशत, वसा 1.5 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 60.8 प्रतिशत, रेशा 3.2 प्रतिशत तथा खनिज लवण जैसे कैल्शियम 68 मि.ग्रा., लोहा 0.21 मि.ग्रा. राइबोफलोविन 0.21 मि.ग्रा., थाइमिन 0.51 मि.ग्रा./ग्रा. आदि। रोगियों के लिए मसूर की दाल अत्यन्त लाभदायक मानी गयी है। क्योंकि यह अत्यन्त पाचक है। मसूर का उपयोग दाल के अलावा विविध उपयोग मं जैसे– नमकीन एवं मिठाइयां आदि बनाने में किया जाता है। इसका हरा व सूखा चारा पशुओं के लिए स्वादिष्ट व पौष्टिक होता है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ो में गांठे पाई जाती है। जिसमें सूक्ष्म जीवाणु वायुमण्डल की स्वतंत्र नत्रजन का स्थिरीकरण भूमि में करते है। जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। इसके अलावा मृदा क्षरण रोकने के लिए मसूर के आवरण फसल के साथ में भी उगाया जाता हैं।

जलवायु :– यह रबी मौसम की फसल है अत: इसके लिए ठण्डी जलवायु उपयुक्त है। परंतु अत्याधिक ठण्ड एवं पाला पड़ने वाले स्थानों पर मसूर की उपज पर प्रतिकूल असर पड़ता है। मसूर के लिए अनुकूलतम तापमान 18–30°ब के बीच होना चाहिए।

संरक्षित खेती के द्वारा मसूर उत्पादन – कृषि की वह पद्धति जिसके अंतर्गत संसाधन सरंक्षण तकनीकी की सहायता के टिकाऊ उत्पादन स्तर के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण को ध्यान में रखते हुए फसल उत्पादन किया जाताहै। संरक्षित खेती मृदा की ऊपरी व निचली सतह के अंदर प्राकृतिक जैविक कियाओं को बढ़ाने पर आधारित है। संरक्षण खेती तीन मूलभूत सिद्धांतों पर आधारित है। जैसे न्यूनतम जुताई, स्थायी रूप से मिट्टी का अच्छादित करना तथा फसल विविधीकरण को अपनाकर ही फसल उत्पादन के स्तर को टिकाऊ बनाया जा सकता है। संरक्षित खेती प्रणाली में उपलब्ध संसाधनों का इष्टतम, उपयोग एवं संरक्षण करते हुए, किसी स्थान की भौतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के अनुसार टिकाऊ फसल उत्पादन लेने के लिए नये–नये तरीके अपनाये जाते है।

भारत में संरक्षित खेती की वर्तमान स्थिति– वर्तमान में वैश्विक स्तर 125 मिलियन हेक्टेयर में की जाती हे, संरक्षित खेती को बढ़ावा देने वाले देशों में अमेरिका ब्राजील, अर्जेटीना, कनाडा और आस्ट्रेलिया अग्रणी देश है, भारत में संरक्षित खेती अभी शुरूआती चरणों में पिछले कुछ वर्शो में जीरो जुताई और संरक्षित को अपनाने से लगभग 1.5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र का विस्तार हुआ है। गंगा सिंधु के मैदानी इलाकों में चावल, गेहूं, कृषि प्रणाली में गेहूं में संरक्षण आधारित कृषि को अपनाया जा रहा है। भारत में राज्य कृशि विश्व विद्यालयों और आई.सी.ए.आर. संस्थानों के उपयुक्त प्रयासों से संरक्षित खेती के विकास और प्रसार को बढ़ावा मिल रहा है।

जलवायु परिवर्तन में संरक्षित खेती का योगदान– वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन की वजह से समय, वर्शा, अनियमित वर्षा जल का वितरण, ओला पाला, अतिवृष्टि कीट एवं बीमारी का प्रकोप इत्यादि जैसे कई गंभीर समस्याएं विश्व के सामने खड़ी है, हमें अपना भविष्य या भावी पीढ़ी सुरक्षित रखने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के उचित प्रबंधन के लिए सतर्क होने की जरूरत है। आज के इस प्रतिस्पर्धा के दौर में किसान अधिक से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए अपने खेतों में अंधाधूंध रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग कर रहा है। जिससे मिट्टी में पौधों के लिए पोषक तत्व का संतुलन दिनों दिन बिगड़ रहा है। जहां एक तरफ मृदा की घटती उत्पादन क्षमता समस्या है, वहीं दूसरी तरफ बढ़ती हुई जनसंख्या की वजह से खाद्यान्न सुरक्ष की चिंता का विशय बनी हुई है ऐसी स्थिति में संरक्षित खेती ही हमारे सामने मात्र एक विकल्प के रूप में उभरकर सामने आती है।

संरक्षित तकनीकें– संरक्षित खेती की तकनीकी के अंतर्गत, फसल चक्र अपनाना, जीरो टिलेज, सूक्ष्म सिंचाई, जरूरत के अनुसार भूमि का समतलीकरण, फसल अवशेश प्रबंधन को बढ़ावा आदि प्रक्रिया सम्मिलित, है, इन सभी तकनीक के उपयोग से वातावरण में प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के साथ खाद्य सुरक्षा के लिए भी संरक्षित खेती अपनानी चाहिए।

संरक्षित खेती के लाभ–

- संरक्षित खेती की वजह से जमीन की उत्पादकता में काफी ईजाफा होता है। साथ ही पानी, उर्जा और जमीन की उर्वरता का भी संरक्षण होता है।
- संरक्षित खेती में मिट्टी की न्यूनतम जुताई की जाती है। जिससे ईधन एवं मानव श्रम दोनों की बचत होती है। क्योंकि कल्टी वेटर या रोटावेटर से मृदा की जुताई करने पर मृदा की भौतिक या रासायनिक गुणों में परिवर्तन आता है। जिससे मृदा क्षरण को बढ़ावा मिलता है। अर्थात् न्यूनतम जुताई करने से मृदा क्षरण को रोका जा सकताहै।
- संरक्षित खेती में पांरपरिक खेती की तुलना में 25–30 प्रतिशत तक समय, ईंधन व श्रम की बचत होती है। साधारणतया संरक्षित खेती में प्रति हेक्टेयर प्रति मौसम 5000 रूपये तक की बचत होती है।
- संरक्षित खेती द्वारा खेती में कीट, पतंगों एवं रोगों का प्रकोप आमतौर पर कम दिखाई देता है।
- इस खेती में प्रयोग मल्चिंग के द्वारा खेतों में जल आवश्यकता को संरक्षण किया जा सकता है एवं खरपतवारों की वृद्धि को कम करना है।
- संरक्षित खेती को करने से बड़े पैमाने पर कार्बन डाइ ऑक्साइड की मात्रा को कम किया जा सकता है। क्योंकि बिना जुता खेत कार्बन डाइऑक्साइड को सोख लेता है, जैसे वातावरण में ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में मदद मिलती है।
- संरक्षित खेती द्वारा मृदा में जीवाणु कवक जो कि लाभ दायक होते है। उनकी बढ़ोतरी होती है, और मृदा की उर्वरता बढ़ाने में सहायक होते है।
- संरक्षित खेती से किसानों की आय में बिना पैसे खर्च किये अधिक उपज एवं मृदा की नमी तथा सभी उपलब्ध स्त्रोतों का प्रयोग आसानी से किया जा सकता है।
- संरक्षित खेती में पारंपरिक खेती की तुलना में समय, धन तथा श्रम की बचत के साथ–साथ उत्पाद में गुणवत्ता विकसित होती है।

मृदा चुनाव :– मसूर फसल के लिए अच्छे जल निकास वाली भूमि जैसे–लोम मृदा किन्तु अम्लीय मृदा में इसकी बुवाई वर्जित है तथा मसूर में उपयोग मृदा का पी.एच. मान 6.5–8.2 वाली मृदा में मसूर की खेती की जा सकती है। परंतु उदासीन गहरी मध्यम संरचना एवं सामान्य जलधारण क्षमता, जीवाश्म पदार्थ युक्त भूमि सर्वोत्तम होती हैं।

बीज उपचार की वैज्ञानिक विधि– मसूर की बुवाई के पूर्व बीजउपचार आवश्यक होता है। सबसे पहले फफूंदीनाशक से उपचार करें तत्पश्चात उपयुक्त कीटनाशी से उपचारित करना चाहिए एवं अंत में बुवाई पूर्व राइजोबियम एवं पी.एस.बी. से उपचारित करना फसल को कीट रोग एवं व्याधियों को नियंत्रित रखता है एवं इसके करने से जड़ ग्रंथियां अधिक बनती है।

बीज एवं बीजोपचार :– सामान्यता मसूर की बीजदर 30–40 कि.ग्रा/हे. पर्याप्त हैं एवं बीज रोग जनित रोगो से बचाव के लिए 2 ग्राम थायरम+1ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किलो बीच से उपचारित कर बुवाई करें। तत्प चात् 5 ग्राम राईजोबियम एवं 5 ग्राम पी.एस.बी. कल्चर/कि.ग्रा. बीज की दर से थोड़ी मात्रा पानी में मिलाकर अच्छी तरह से छिड़काव करें ताकि कल्चर अच्छी तरह से चिपक जाये।

बुवाई का समय एव विधि :– असिंचित अवस्था में नमी उपलब्ध रहने पर अक्टूबर एवं नवम्बर के बीच में मसूर की बोनी करना चाहिए तथा सिंचित अवस्था में 15 अक्टूबर से लेकर 15 नवम्बर तक की जानी चाहिए।

बीज की गहराई :– बीज की गहराई सामान्यत: 4–5 से.मी. तथा 30 से.मी. कतारों के बीच की दूरी पर बुवाई करें।

सिंचाई :– सामान्यत: मसूर की फसल असिंचित क्षेत्रो में ही ली जाती है। इसलिये यदि सिंचाई सुलभ हो तो बुवाई पलेवा लगाकर करना चाहिए। इसमें मिट्टी में नमी बनी रहती है तथा अकुंरण अच्छा होता है। इसके बाद फसल में सिंचाई की आव कता नही होती है। यदि पानी उपलब्ध हो तो एक सिंचाई फूल आने के पहले द्वबोनी के 40–45 दिन बादऋ सिंचाई करें।

खाद व उर्वरक प्रबंधन :– मृदा को स्वस्थ व उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिए 10–12 टन/हे. सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद अंतिम जुताई के समय मिट्टी में मिला दे। मसूर के अच्छे उत्पादन के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन 60 कि.ग्रा. स्फुर एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करना चाहिए।

उन्नत किस्में :–

क्रम	किस्म	उपज (क्वि./हे.)	अवधि
1.	JL-3	11.40	112-118
2.	JL-1	12.15	112-118
3.	IPL-81	12.14	112-118
4.	पंत एल–209	11.13	110-115
5.	एल–4594	12.14	112-118
6.	वी.एल.मसूर–4	12.15	115-118
7.	मल्लिका	11.14	115-120